प्रकाशित: 5 अप्रैल 2019 को दैनिक जागरण पर प्रकाशित

चयन के सीमित विकल्प: विपक्षी दलों ने लोकसभा चुनाव को मोदी-केंद्रित बना दिया

डॉ. एके वर्मा - लोकसभा चुनाव नतीजों को लेकर तमाम कयास लगाए जा रहे हैं। वास्तविक स्थिति 23 मई को मतगणना के बाद स्पष्ट होगी। इस दौरान उन प्रवृत्तियों को पकड़ने की कोशिश हो रही है जो परिणामों को प्रभावित कर सकती हैं। विपक्षी दलों ने चुनाव मोदी-केंद्रित बना दिया है या तो आप प्रधानमंत्री मोदी के साथ हैं या उनके खिलाफ। ऐसा बंटवारा कभी साम्यवादी विचारक मार्क्स के बारे में हुआ करता था। ऐसी मान्यता थी कि या तो आप मार्क्सवादी हैं या उसके विरोधी। मार्क्स दार्शनिक विचारक थे, मोदी व्यावहारिक राजनीतिज्ञ हैं। मार्क्स वामपंथी थे। मोदी दक्षिणपंथी हैं पर दोनों उपेक्षितों और वंचितों के लिए चिंतित हैं।

राहुल गांधी ने मोदी पर 'सूट-बूट' यानी अमीरों की सरकार होने का आरोप लगाया था और अभी भी यह आक्षेप लगाते हैं कि वह चंद उद्यमियों की चिंता करते हैं। क्या वह सच है ? मोदी सरकार द्वारा 2014 में शुरू जनधन योजना के तहत 30 करोड़ से अधिक बैंक खाते खुलवाने से गरीबों के वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया तेज हुई है। गरीबों की आर्थिक स्थिति कुछ बेहतर हुई है, क्योंकि सरकारी योजनाओं का लाभ उनके खाते में सीधे आने लगा है। आम चुनावों का तात्कालिक संदर्भ मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ में भाजपा की हार और कांग्रेस की जीत है। इससे उत्साहित कांग्रेस ने उप्र में प्रियंका और ज्योदिरादित्य सिंधिया को उतारा।

कांग्रेस प्रियंका को 'प्रमोट' कर रही है और उन्हें 'पार्टी-आइकॉन' बनाना चाहती है, लेकिन राजनीति नए दौर में है और 'कॉस्मेटिक-पॉलिटिक्स' का प्रभाव संदिग्ध है। अमेठी और रायबरेली तक में कांग्रेस का जनाधार कमजोर हो चुका है और शायद इसीलिए राहुल को दक्षिण का रुख करना पड़ा। जिनको मोदी नापसंद हैं उनके लिए इंदिरा गांधी की तरह प्रियंका आकर्षण का केंद्र हो सकती हैं, पर इंदिरा के विपरीत प्रियंका का राजनीति में न तो कोई दखल रहा है, न दिलचस्पी। जनता उनसे क्यों प्रभावित हो?

उप्र में सपा-बसपा गठजोड़ से भाजपा विरोधी माहौल बना जरूर, पर सपा-बसपा अंतर्विरोध और लगभग 40-40 दलीय प्रत्याशियों को टिकट से वंचित करने से साझा उम्मीदवारों के विरुद्ध दोनों दलों में विस्फोटक स्थिति है। मतों के हस्तांतरण की जिस बुनियाद पर गठबंधन बना, वह संकट में है। जहां-जहां सपा प्रत्याशी है वहां दलित मतदाता मोदी को वोट देना चाहता है। जहां बसपा प्रत्याशी है वहां सपा का मुस्लिम मतदाता कांग्रेस और यादव /ओबीसी मतदाता भाजपा की ओर आकर्षित है। जबसे सपा का विघटन हुआ और अखिलेश-शिवपाल का

बंटवारा हुआ तबसे सपा का मतदाता पार्टी की धूमिल संभावना देख किसी मजबूत ठौर-ठिकाने की तलाश में है।

ऐसी मान्यता है कि मुस्लिम भाजपा को वोट नहीं देते। 1990 के दशक में मुट्ठी भर मुस्लिम भाजपा को वोट देते थे, लेकिन अब भाजपा का मुस्लिम जनाधार बढ़ा है। मोदी सरकार द्वारा तीन-तलाक और हज-सब्सिडी आदि पर जो पहल की गई उससे मुस्लिम महिलाओं और हाजियों में वह लोकप्रिय हुए हैं। कुछ मुस्लिमों के अनुसार मोदी की विकास योजनाएं सेक्युलर हैं जिनसे उनकी गरीब बेटियों को पढ़ने और आगे बढ़ने तथा मुस्लिम युवकों को स्व -रोजगार और स्व-व्यापार करने की प्रेरणा मिली।

तलाक के मुद्दे पर मुस्लिम महिलाएं मोदी की तरफ आशा से देख रही हैं. कई मुस्लिम युवतियों के अनुसार उनके परिवारों में तलाक ने उनकी चार-चार पीढ़ियों को बर्बाद कर दिया। उप्र जैसे बड़े राज्य में जहां 2004 और 2009 में केवल तीन प्रतिशत मुस्लिमों ने भाजपा को वोट दिया वहीं 2014 लोकसभा और 2017 विधानसभा में यह नौ प्रतिशत हो गया। राष्ट्रीय स्तर पर भी 2014 लोकसभा में भाजपा को आठ प्रतिशत मुस्लिम मत मिले जो 2009 लोकसभा के मुकाबले दोगुने थे। यदि मौजूदा रुझान संकेतक हैं तो न केवल उप्र में, वरन देश के स्तर पर भी भाजपा के मुस्लिम मतों में लगभग तीन प्रतिशत का इजाफा हो सकता है।

अक्सर आरोप लगते हैं कि मोदी ने कुछ किया ही नहीं, केवल जुमलेबाजी की। क्या वास्तव में मोदी ने पिछले पांच वर्षों में कुछ नहीं किया? पूर्वोत्तर-भारत को लीजिए। वहां लोगों को मोदी में विकास की नई रोशनी दिखी। परिणामस्वरूप 2016 से लगभग सभी राज्य असम, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, नगालैंड और त्रिपुरा-भाजपा और सहयोगी दलों की झोली में आ गए। बंगाल, असम और त्रिपुरा जहां बांग्लादेशी मुस्लिम घुसपैठियों की गंभीर समस्या है वहां लोगों का मानना है कि बांग्लादेश से विवाद के बावजूद मोदी ने बांग्लादेश से मधुर संबंध बनाए हैं। अपने हितों की रक्षा करते हुए पड़ोसियों से अच्छे रिश्ते बनाये रखना मोदी के राजनीतिक कौशल को बताता है। मोदी के नेतृत्व को विश्व के सभी बड़े -छोटे देशों ने मान्यता दी है। प्रतिरक्षा हो या पर्यावरण, अर्थ हो या आतंक, मोदी की सीधी बात लोगों के दिलों में उतरती है, लेकिन मोदी सरकार की कमी रही है कि उनके मंत्रियों, सांसदों और विधायकों ने सरकार के कार्यों की मार्केटिंग ठीक से नहीं की।

चुनावों में दलों की सफलता का पैमाना उनका जनाधार होता है। मोदी ने भाजपा के जनाधार में आमूल-चूल परिवर्तन किया है। उन्होंने ग्रामीण क्षेत्र के किसानों और शहरों में असंगठित क्षेत्र के गरीबों-मजदूरों को लक्ष्य किया है। अंतरिम बजट में किसानों को छह हजार रुपये प्रतिवर्ष और असंगठित मजदूरों को 60 वर्ष की आयु पर तीन हजार रुपये प्रतिमाह पेंशन देने से तमाम तबके लाभान्वित होंगे। इसी प्रकार आयुष्मान भारत योजना में मार्च 2019 तक लगभग तीन

करोड़ लोगों के ई-कार्ड बन गए हैं और 17 लाख से ज्यादा लोग लाभान्वित हो चुके हैं, लेकिन मोदी सरकार के लिए डीबीटी वैसे ही 'गेम-चेंजर' सिद्ध होगी जैसे 2017 चुनावों में 'उज्ज्वला। डीबीटी के अंतर्गत अभी तक 55 मंत्रालयों की 439 स्कीमों द्वारा पूरे देश में लगभग सात लाख करोड़ रुपये का प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण गरीबों और वंचितों को हो चुका है। यह तबका 'ओपिनियन-मेकर' तो नहीं, पर 'गवर्नमेंट-मेकर' जरूर हैं। कांग्रेस ने भी अपने घोषणा-पत्र में अच्छे और लुभावने वायदे किए हैं पर ऐसे वायदे तो जनता 1950 से सुनती आ रही है। क्या वास्तव में जनता घोषणा-पत्रों को गंभीरता से लेती है ? क्या वास्तव में वह उन वायदों के आधार पर मतदान करती है?

चुनावी वर्ष में प्रयागराज में आयोजित कुंभ के प्रभाव की भी अनदेखी नहीं की जा सकती। कुंभ की दिव्यता और भव्यता तथा प्रशासनिक सुव्यवस्था के सकारात्मक राजनीतिक परिणाम हो सकते हैं। प्रधानमंत्री द्वारा सफाई कर्मचारियों के चरण पखारने और निषाद-मल्लाह समुदाय की ख़ुशी के चलते निषाद-पार्टी सपा से नाता तोड़ भाजपा-गठबंधन में सम्मिलित हुई है। भारतीय मतदाता लोकसभा चुनावों में राष्ट्रीय नेतृत्व का महत्व समझ चुका है। उसके पास चयन के सीमित विकल्प हैं। सभी राजनीतिक दलों के शीर्ष नेता हाशिये पर हैं , लेकिन अपनी साफ-सुथरी छवि और कर्तव्य-निष्ठा के कारण मोदी सबसे अलग हैं। मोदी से असहमत होना , उनकी आलोचना करना विपक्ष का फर्ज है, लेकिन क्या उसके पास कोई बेहतर वैकल्पिक नीतियां और नेतृत्व है?

(लेखक सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ सोसायटी एंड पॉलिटिक्स के निदेशक एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)